UP Board Solutions for Class 9 Sanskrit Chapter 2 सुभाषितानि (पद्य-पीयूषम्)

परिचय-'सुभाषित' का अर्थ होता है—सुन्दर वचन, सुन्दर बातें, सुन्दर उक्तियाँ। सुभाषितों से जीवन का निर्माण होता है और जीवन महान् बनता है। जीवन को सफल बनाने के लिए सुभाषित गुरु-मन्त्र के समान हैं। संस्कृत-साहित्य में सुभाषितों का अपरिमित भण्डार संचित है। इसमें ज्ञान के जीवनोपयोगी कथन होते हैं, जो जीवन में उचित आचरण का निर्देश देते हैं। । प्रस्तुत पाठ में 15 सुभाषित श्लोकों का संकलन विविध ग्रन्थों से किया गया है। प्रत्येक श्लोक स्वयं में पूर्ण है।

पद्यांशों की ससन्दर्भ व्याख्या

(1)
अन्यायोपार्जितं वित्तं दशवर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्ते चैकादशे वर्षे समूलं तद् विनश्यति ॥

शब्दार्थ
अन्यायोपार्जितं = अन्याय से कमाया गया।
वित्तं = धन।
तिष्ठति = ठहरता है।
समूलम् = मूल (धन) सहित, पूर्ण रूप से।
विनश्यति ६ नष्ट हो जाता है।

सन्दर्भ
प्रस्तुत नीति-श्लोक हमारी पाठ्य-पुस्तक 'संस्कृत पद्य-पीयूषम्' में संकलित 'सुभाषितानि' शीर्षक पाठ से उद्धृत है।

[**संकेत**–प्रस्तुत पाठ के सभी श्लोकों के लिए यही सन्दर्भ प्रयुक्त होगा।] प्रसंग-प्रस्तुत श्लोक में अन्याय से कमाये गये धन को शीघ्र नाशवान् बताया गया है। अन्वय-अन्यायोपार्जितं वित्तं दशवर्षाणि तिष्ठति, एकादशे च वर्षे प्राप्त तद् समूलं विनश्यति।

व्याख्या
अन्याय द्वारा कमाया गया धन मनुष्य के पास दस वर्ष तक ही ठहरता है। ग्यारहवाँ वर्ष प्राप्त होने पर वह मूलधन-सहित नष्ट हो जाता है; अर्थात् वह धन एक निश्चित समय तक; जीवन के एक छोटे अंश तक; ही स्थिर रहता है, उसके बाद नष्ट हो जाता है। अतः मनुष्य को अन्यायपूर्वक धन अर्जित करने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए।

(2)
अतिव्ययोऽनपेक्षा च तथाऽर्जनमधर्मतः ।
मोक्षणं दूरसंस्थानं कोष-व्यसनमुच्यते ॥

शब्दार्थ-

अतिव्ययः = अधिक खर्च।
अनपेक्षा = देखभाल न करना, असावधानी।
अधर्मतः अर्जनम् = अधर्म द्वारा अर्जित करना।
मोक्षणम् = मनमाना त्याग करना या दान देना।
दूरसंस्थानम् = अपने से दूर छिपाकर रखना।
कोष-व्यसनम् = धन के विनाश के दोष (कारण)।
उच्यते = कहे गये।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में धन के विनाश के कारण बताये गये हैं।

अन्वय
अतिव्यय; अनपेक्षा तथा अधर्मतः अर्जनम् , मोक्षणं दूरसंस्थानं च कोष-व्यसनम् उच्यते।

व्याख्या
अत्यधिक खर्च, धन की देखभाल न करना तथा अधर्म या अन्याय द्वारा कमाना, मनमाना त्याग, अपने से दूर (छिपाकर) रखना-ये धन के विनाश के कारण हैं। तात्पर्य यह है कि धन का अत्यधिक व्यय करना, उसकी उचित देखभाल न करना, उसका अधर्म-अन्यायपूर्वक अर्जन करना, पर्याप्त दान करना और उसे अपने से दूर अर्थात् छिपाकर रखना—इन सभी से धन नष्ट हो जाता है।

(3)
नालसाः प्राप्नुवन्त्यर्थान् न शठाः न च मायिनः।।
न च लोकापवाभीताः न च शश्वत् प्रतीक्षिणः ॥

शब्दार्थ
अलसाः = आलसी रोग।
प्राप्नुवन्त्यर्थान् (प्राप्नुवन्ति + अर्थान्) = धनों को प्राप्त |
करते हैं। मायिनः = छल-कपट वाले।
लोकापवादभीताः = लोक-निन्दा से डरे हुए। शश्वत्
प्रतीक्षिणः = निरन्तर धन की प्रतीक्षा करने वाले।। .

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में धन को प्राप्त न कर पाने वाले लोगों के विषय में बताया गया है।

अन्वयन
अलसाः, ने शठाः, न च मायिनः, न च लोकापवाभीताः, न शश्वत् प्रतीक्षिणः अर्थान् प्राप्नुवन्ति।

व्याख्या
ऐसे लोग धने नहीं कमा सकते हैं, जो आलसी हैं, दुष्ट हैं, अत्यन्त चालाक अर्थात् छल-कपट करने वाले हैं, जो सांसारिक बदनामी से भी डरे हुए हैं अथवा लगातार उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने वाले हैं। तात्पर्य यह है कि धन-अर्जन के इच्छुक व्यक्तियों को इन दुर्गुणों से मुक्त रहना चाहिए।

https://www.evidyarthi.in/

(4)
वरं दारिद्रयमन्यायप्रभवाद् विभवादिह।
कृशताऽभिमता देहे पीनता न तु शोफतः ॥

शब्दार्थ
वरं = श्रेष्ठ।
दारिद्रयं = गरीबी।
अन्यायप्रभवात् = अन्याय के द्वारा उत्पन्न किये गये।
विभवात् = धन की अपेक्षा।
इह = इस लोक में।
कृशता = कमजोरी।
अभिमता = अभीष्ट है।
पीनता = मोटापा।
शोफतः = सूजन के कारण।।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में अन्याय से धनार्जन की अपेक्षा गरीबी को श्रेष्ठ बताया गया है।

अन्वय
इह अन्यायप्रभवात् विभवात् दारिद्रयं वरम् (अस्ति)। देहे कृशता अभिमता, न तु शोफतः पीनता।

व्याख्या
इस संसार में निर्धन होकर रहना श्रेष्ठ है, परन्तु अन्यायपूर्वक धन अर्जित करना उचित नहीं है। जैसे शरीर में कमजोरी (दुबलापन) उचित है, परन्तु सूजन के कारण मोटापा अच्छा नहीं है। तात्पर्य यह है कि अन्यायपूर्वक धन का अर्जन उसी प्रकार उचित नहीं है जिस प्रकार शरीर का स्थूल होना।

(5)
अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च।
वञ्चनं चाऽपमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत् ॥

शब्दार्थ
अर्थनाशम् = धन के विनाश को।
मनस्तापम् = मन की पीड़ा को।
गृहे = घर में।
दुश्चरितानि = बुरे आचरण को।
वञ्चनम् = ठगे जाने को।
मतिमान् = बुद्धिमान्।
न प्रकाशयेत् = प्रकट न करे।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में दूसरों के सम्मुख प्रकट न करने योग्य बातों का वर्णन किया गया है।

अन्वय
मतिमान् अर्थनाशं, मनस्तापं, गृहे दुश्चरितानि च, वञ्चनं च, अपमानं च न प्रकाशयेत्।

व्याख्या
बुद्धिमान पुरुष वही है, जो धन के नष्ट हो जाने को, मन की वेदना को, घर में बुरे आचरण को, ठगे जाने को और अपमान को दूसरों पर प्रकट नहीं करता। तात्पर्य यह है कि दूसरों से कहने पर सर्वत्र उपहास के अतिरिक्त कुछ भी प्राप्त नहीं होता है।

(6)
अतिथिर्बालकः पत्नी जननी जनकस्तथा।
पञ्चैते गृहिणः पोष्या इतरे न स्वशक्तितः॥

शब्दार्थ
अतिथिः = मेहमान।
जननी = माता।
जनकः, = पिता।
गृहिणः = गृहस्थ के।
पोष्या = पोषण करने के योग्य।
इतरे = दूसरे।
स्वशक्तितः = अपनी शक्ति के अनुसार।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में बताया गया है कि प्रत्येक गृहस्थ पुरुष को पाँच लोगों का अवश्य पोषण करना चाहिए।

अन्वय
गृहिणः अतिथिः, बालकः पत्नी, जननी तथा जनकः एते पञ्च पोष्याः (सन्ति), इतरे च स्व-शक्तत: (पोष्याः सन्ति)।

व्याख्या
गृहस्थ पुरुषों को अतिथि, बालक, पत्नी, माता तथा पिता–इन पाँचों का पालन-पोषण तो अवश्य ही करना चाहिए और दूसरों का अपनी शक्ति के अनुसार पालन-पोषण करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त पाँच का पालन-पोषण करने में किसी भी गृहस्थ को प्रमाद नहीं करना चाहिए।

(7)
नात्यन्तं सरलैर्भाव्यं गत्वा पश्य वनस्थलीम्।
छिद्यन्ते सरलास्तत्र कुब्जास्तिष्ठन्ति सर्वदा ॥

शब्दार्थ
नात्यन्तम् (न + अत्यन्तम्) = अत्यधिक नहीं।
सरलैर्भाव्यं = सीधा-सच्चा होना।
गत्वा = जाकर।
पश्य = देखो।
वनस्थलीम् = वन में।
छिद्यन्ते = काटते हैं।

https://www.evidyarthi.in/

कुब्जाः = कुबड़े-टेढ़े-मेढ़े वृक्ष, कुटिल।
तिष्ठन्ति = स्थिर रहते हैं।
सर्वदा = हमेशा। |

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में बताया गया है कि व्यक्ति को आवश्यकता से अधिक सज्जन नहीं होना चाहिए।

अन्वय
अत्यन्तं सरलैः न भाव्यं, वनस्थलीं गत्वा पश्य। तत्र सरलाः (भवन्ति जनाः) छिद्यन्ते कुब्जाः सर्वदा तिष्ठन्ति।

व्याख्या
व्यक्ति को आवश्यकता से अधिक सीधा नहीं होना चाहिए; वन में जाकर देखो। लोग वन में सीधे वृक्षों को ही काटते हैं; टेढ़े-मेढ़े वृक्ष यों ही खड़े रहते हैं। तात्पर्य यह है कि सीधे और सज्जन व्यक्तियों को ही लोग हानि पहुँचाते हैं, दुर्जन व्यक्तियों को नहीं। यही कारण है कि वन में सीधे वृक्ष ही काटे जाते हैं, टेढ़े-मेढ़े वृक्ष नहीं। अतः अधिक सज्जनता व्यक्ति के स्वयं के लिए घातक बन जाती है। तुलसीदास जी ने भी कहा है-'कतहुँ सिधायहु ते बड़ दोषू।'

(8)
मौनं कालविलम्बश्च प्रयाणं भूमि-दर्शनम्।
भृकुट्यन्यमुखी वार्ता नकारः षड्विधः स्मृतः ॥

शब्दार्थ
कालविलम्बः= समय में देरी करना।
प्रयाणम् = चले जाना।
भूमिदर्शनम् = भूमि की ओर देखने लग जाना।
भृकुटी = भौंह तिरछी करना।
अन्यमुखी वार्ता = दूसरे की ओर मुंह करके बातें करने लग जाना।
नकारः = मना करना, मनाही।
षड्विधः = छः प्रकार का।
स्मृतः = कहा गया है।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में किसी विषय में अरुचि प्रदर्शित करने के लक्षणों का उल्लेख किया गया है।

अन्वय
मौनं, कालविलम्बः, प्रयाणं, भूमिदर्शनं, भृकुटी, अन्यमुखी वार्ता चेति षड्विधः नकारः स्मृतः।।

व्याख्या
चुप रहना, समय में देरी करना, अन्य स्थान पर चले जाना, भूमि की ओर देखने लगना, भौंहें टेढ़ी कर लेना, दूसरे की ओर मुँह करके बात करने लगनी-ये छ: प्रकार के मना करने के संकेत स्मृतियों में कहे गये हैं। तात्पर्य यह है कि कोई व्यक्तिं बात करते समय इन छ: लक्षणों में से कोई भी एक लक्षण प्रकट करता है तो व्यक्ति को समझ लेना चाहिए कि उसकी आपकी बातों में कोई रुचि नहीं है अथवा वह आपकी बातों से सहमत नहीं है।

(9)
प्रत्यक्षे गुरवः स्तुत्याः परोक्षे मित्र-बान्धवाः।
कर्मोन्ते दास-भृत्याश्च पुत्री नैव च नैव च ।।

शब्दार्थ
प्रत्यक्षे = सामने, सम्मुख।
गुरवः = गुरु की।
स्तुत्योः = प्रशंसा के योग्य।
परोक्षे = पीछे, बाद में, अनुपस्थिति में।
कर्मान्ते = काम की समाप्ति पर।
भृत्याः = नौकरों की।
नैव = नहीं।।

प्रसंग
कार्य करने पर किसकी किस समय प्रशंसा करनी चाहिए, इसका प्रस्तुत श्लोक में वर्णन किया गया है।

अन्वय
गुरुवः प्रत्यक्षे (स्तुत्याः भवन्ति), मित्र-बान्धवाः परोक्षे (स्तुत्याः भवन्ति), दास-भृत्याः च कर्मान्ते (स्तुत्याः भवन्ति) पुत्राः नैव च नैव च स्तुत्याः (भवन्ति)। |

व्याख्या
गुरुजन सामने प्रशंसा के योग्य होते हैं, मित्र और बन्धुजनों की उनकी अनुपस्थिति में प्रशंसा करनी चाहिए। सेवकों और नौकरों की कर्म की समाप्ति पर प्रशंसा करनी चाहिए। पुत्रों की प्रशंसा कभी नहीं करनी चाहिए। तात्पर्य यह है कि पुत्र की प्रशंसा कभी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि सम्भव है कि प्रशंसा से हुए अभिमान के कारण उसकी उन्नति का मार्ग अवरुद्ध हो जाए।

(10)
क्षणे तुष्टा क्षणे रुष्टास्तुष्ट रुष्टाः क्षणे क्षणे।
अव्यवस्थितचित्तानां प्रसादोऽपि भयङ्करः ॥

शब्दार्थ
क्षणे = पलभर में।
तुष्टाः = सन्तुष्ट होने, प्रसन्न होने वाले।
रुष्टाः = रूठने वाले, अप्रसन्न होने वाले।
क्षणे-क्षणे = पल-पल में।
अव्यवस्थितचित्तानां = चंचल मन वालों का अर्थात् जिनको मन एकाग्र नहीं।
प्रसादः = कृपा, अनुगृह।
अपि = भी। भयङ्करः = भयानक।।

प्रसंग
इस श्लोक में बताया गया है कि किस प्रकार के व्यक्ति को किस प्रकार के लोगों से सावधान रहना चाहिए।

https://www.evidyarthi.in/

अन्वय
(ये जनाः) क्षणे तुष्टाः क्षणे रुष्टाः क्षण-क्षणे तुष्टाः-रुष्टाः (ईदृशाः) अव्यवस्थित चित्तानां (जनानां) प्रसादः अपि भयङ्करः (भवति)। |

व्याख्या
जो लोग पलभर में सन्तुष्ट हो जाते हैं, अर्थात् प्रसन्न हो जाते हैं, पलभर में नाराज हो जाते हैं और पल-पल में नाराज और अप्रसन्न होते रहते हैं, ऐसे अस्थिर चित्त वाले लोगों की अनुकम्पा भी भयंकर होती है। तात्पर्य यह है कि व्यक्ति को ऐसे लोगों से दूर ही रहना चाहिए।

(11)
षड् दोषाः पुरुषेणेह हातव्या भूतिमिच्छता ।
निद्रा तन्द्रा भयं क्रोध आलस्यं दीर्घसूत्रता ॥

शब्दार्थ
षड् = छः।
पुरुषेण = मनुष्य द्वारा।
हातव्याः = त्याग करना चाहिए।
भूतिम् इच्छता = कल्याण चाहने वाले मनुष्य को।
तन्द्रा = ऊँघना, निद्रालुता।
दीर्घसूत्रता = किसी काम को धीरे-धीरे करना; अर्थात् मन्द गति से कार्य करना।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में मनुष्य के दोषों को बताकर उन्हें त्यागने का परामर्श दिया गया है।

अन्वेय
इह भूतिम् इच्छता पुरुषेण निद्रा, तन्द्रा, भयं, क्रोधः, आलस्यं, दीर्घसूत्रता–(एते) षड् दोषाः हातव्याः।।

व्याख्या
इस संसार में कल्याण चाहने वाले मनुष्य को नींद, ऊँघना (बँभाई लेना), भय, क्रोध, आलस्य और धीरे-धीरे काम करना-इन छः दोषों का त्याग कर देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जिस व्यक्ति में भी ये दोष होंगे, वह कभी उन्नति नहीं कर सकता।

(12)
विद्या विनयाऽवाप्तिः सा चेदविनयाऽऽवहा।
किं कुर्मः कं प्रति बूमः गरदायां स्वमातरि ॥

शब्दार्थ
विद्यया = विद्या से।
विनयाऽवाप्तिः = विनय की प्राप्ति।
चेत् = यदि।
अविनयाऽऽवहा = उद्दण्डता लाने वाली।
कुर्मः = करें।

बूमः = कहें।
गरदायाम् = विष देने वाली हो जाने पर।
स्वमातरि = अपनी माता।।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में विद्या के उद्देश्य को विनय से सम्पन्न होना बताया गया है।

अन्वय
विद्यया विनयाऽवाप्तिः (भवति) सा विद्या अविनयाऽऽवहा चेत् (स्यात्) किं कुर्मः? | स्वमातरि गरदायां के प्रति ब्रूमः? |

व्याख्या
विद्या से विनय की प्राप्ति होती है। यदि वह उद्दण्डता प्रदान करने वाली हो जाए तो हम क्या करें? अपनी ही माता के विष देने वाली हो जाने पर हम किससे कहें? तात्पर्य यह है कि यदि विद्यार्जन से हमें विनयी होने का गुण नहीं प्राप्त होता, तो ऐसा विद्यार्जन हमारे लिए व्यर्थ है।

(13)
सर्वे यत्र विनेतारः सर्वे पण्डितमानिनः।।
सर्वे महत्त्वमिच्छन्ति तद् वृन्दम वसीदति ॥

शब्दार्थ
सर्वे = सभी।
यत्र = जहाँ।
विनेतारः = नेता, मार्गदर्शक।
पण्डित = विद्वान्।
मानिनः= मानने वाले।
महत्त्वमिच्छन्ति (महत्त्वम् + इच्छन्ति) = प्रशंसा चाहते हैं।
वृन्दम् = समूह।
अवसीदति = निराश होता है।

प्रसंग
किस समूह की दलगत स्थिति निराशापूर्ण होती है; प्रस्तुत श्लोक में इस बात को समझाया गया है।

अन्वय
तद् वृन्दम् अवसीदति, यत्र सर्वे विनेतारः सर्वे पण्डितमानिनः, सर्वे महत्त्वम् इच्छन्ति।

व्याख्या
वह दल अथवा समूह निराश होता है, जहाँ सभी नेता हों, सब अपने आपको विद्वान् मानते हों और सबै दल में महत्त्व पाने की इच्छा करते हों। तात्पर्य यह है कि जिस सभा में सभी लोग महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करने की इच्छा रखते हों, वह सभा कभी सफल नहीं होती; अर्थात् नेतृत्व एक के हाथ में ही होना चाहिए।

https://www.evidyarthi.in/

(14)
सम्पूर्णकुम्भो न करोति शब्दमर्दो घटो घोषमुपैति नूनम् ।।
विद्वान् कुलीनो न करोति गर्वं जल्पन्ति मूढास्तु गुणैर्विहीनाः ॥

शब्दार्थ
सम्पूर्णकुम्भः = पूण रूप से भरा हुआ घड़ा।
शब्दम् = आवाज।
अर्द्धः = आधा।
घषम् उपैति = शब्द करता है।
नूनम् = निश्चय ही।
कुलीनः = अच्छे कुल में उत्पन्न।
गर्वम् = अहंकार।
जल्पन्ति = बक्रवास करते हैं।
मूढाः = मूर्ख।
गुणैर्विहीनाः = गुणों से रहित।

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में मूर्ख और गुणी लोगों की पहचान बतायी गयी है।

अन्वय
सम्पूर्णकुम्भ: शब्दं न करोति। अर्धः घट: नूनं घोषम् उपैति। कुलीनः विद्वान् गर्वं न करोति। गुणैर्विहीनाः मूढाः तु जल्पन्ति।

व्याख्या
(जल से) भरा हुआ घड़ा (चलते समय) शब्द नहीं करता है। (जल से) आधा भरा हुआ घड़ा निश्चय ही (चलते समय छलकने के) शब्द को प्राप्त होता है। उच्च कुल में उत्पन्न विद्वान् घमण्ड नहीं करता है, लेकिन गुणों से रहित मूर्ख लोग (व्यर्थ में) बकवास करते हैं। तात्पर्य यह है कि विद्वान् व्यक्ति व्यर्थ कभी बकवास नहीं करते हैं और मूर्ख बकवास में ही अपना समय व्यतीत करते हैं।

(15)
दरिद्रता धीरतया विराजते कुरूपता शीलतया विराजते ।
कुभोजनं चोष्णतया विराजते कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते ॥

शब्दार्थ
दरिद्रता = निर्धनता, गरीबी।
धीरतया = धैर्य के कारण।
विराजते = सुशोभित होता है।
कुरूपता = बदसूरती।
शीलतया = सदाचार और अच्छे स्वभाव के कारण।
कुभोजनम् = स्वादरहित । भोजन।
उष्णतया = गर्म रहने के कारण।
कुवस्त्रता= बुरे वस्त्र, मलिन वस्त्र।
शुभ्रतया= साफ होने से। |

प्रसंग
प्रस्तुत श्लोक में उन बातों पर प्रकाश डाला गया है, जिनके द्वारा व्यक्ति की शोभा बढ़ती है।

अन्वय
दरिद्रता धीरतया विराजते। कुरूपता शीलतया विराजते। कुभोजनं च उष्णतया विराजते। कुवस्त्रता च शुभ्रतया विराजते।।

व्याख्या
दरिद्रता धैर्य रखने से सुशोभित होती है। बदसूरती अच्छे स्वभाव या आचरण से सुशोभित होती है। स्वादरहित भोजन गर्म करने से शोभा पाता है और बुरे वस्त्र पहनना सफेद से या साफ रहने से शोभा पाता है। तात्पर्य यह है कि यदि किसी व्यक्ति में उपर्युक्त दुर्गुण हों तो वह उनके उपायों को अपनाकर अपने आपको गुणवान् बना सकता है।

https://www.evidyarthi.in/